नारी-शिक्षा का लक्ष्य एवं स्वरूप

☐ डॉ० (श्रीमती) विद्याबिन्दुसिंह

५१३-डी/२ मम्फोर्डगंज

इलाहाबाद (उ०प्र०)

नारी हो या नर, मानव-जीवन का चरम लक्ष्य है अपने दायित्वों का समुचित निर्वाह करते हुए जीवन में सफलताओं की उपलब्धि। यह उपलब्धि और क्षमता देती है शिक्षा। यह सत्य है कि देश, काल और व्यक्ति के स्वभावानुसार लक्ष्य भिन्न-भिन्न होते हैं।

नारी का महत्व नर से अधिक स्वीकार करने वाले उसमें दो मात्राओं की अधिकता के साथ ही उसके कर्त्तव्य-क्षेत्र को भी अधिक बड़ा बताते हैं। वह नर की जननी है, सहधर्मिणी है, संरक्षिका है, उपासिका है। वह विभिन्न सम्बन्धों के माध्यम से नर के सुख के साधन जुटाकर ही सन्तुष्ट होती है। आर्य संस्कृति में नारी अर्द्धाङ्गिनी होने के साथ ही पूजनीय भी है—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाक्रियाः॥

आर्य पुरुषों ने केवल शाब्दिक सद्भावना का प्रदर्शन ही नहीं किया था वरन् उस युग में नारी को पुरुष के समान ही शिक्षा प्राप्त करने का, यज्ञ में भाग लेने का अधिकार था। वैदिक शब्द 'दम्पती' आज भी इसी ओर संकेत करता है कि नारी और पुरुष एक ही घर के समान भागीदार हैं। हमारे यहाँ अर्द्धनारीश्वर के रूप में ईश्वर की कल्पना की गई है। वैदिक युग में हवनकुण्ड की पहली ईंट पत्नी ही रखती थी। विद्वानों और लेखकों में उसका नाम यश था। गृहकार्य में कुशलता, धनुष-बाण, टोकरियाँ बनाने और वस्त्र बुनने की शिक्षा उन्हें बचपन से ही मिलती थी। 'समन' नामक त्यौहार पर लड़के लड़कियाँ एक दूसरे को देखते, पसन्द करते और जीवन-साथी के रूप में चुनते थे।

स्त्रियों को तलाक, विधवा-विवाह का अधिकार भी था। स्वेच्छा से वे विधवा जीवन भी बिता सकती थीं। पर्दाप्रथा नहीं थी।

मातृशक्ति की उपासना माँ के महत्त्व को स्पष्ट करती है। ब्रह्मवैवर्त पुराण में नारी के सोलह प्रकार के मातृरूपों की ओर इंगित किया गया है—

स्तनदात्री, गर्भदात्री, भक्ष्यदात्री गुरुप्रिया।
अभीष्टदेवपत्नी च पितुः पत्नी च कन्यका॥
सगर्भजा या भगिनी, पुत्रपत्नी प्रिया प्रसूः।
मातुर्माता, पितुर्माता सोदरस्य प्रिया तथा॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मातुः पितुश्च भगिनी, मातुलानी तथैव च।
जनानां वेदविहिता मातरः षोडशस्मृता ॥

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, ग० १५ अ०)

स्तन पिलाने वाली, गर्भधारण करने वाली, भोजन देने वाली, गुरुपत्नी, इष्ट देवता की पत्नी, पिता की पत्नी (विमाता), पितृ-कन्या (सौतेली बहन), सहोदरा बहन, पुत्रवधू, सास, नानी, दादी, भाई की पत्नी, मौसी, बुआ और मामी—वेद में मनुष्यों के लिये ये सोलह प्रकार की मातायें बतलायी हैं।

शिक्षित नारी ही अपने इन सोलह प्रकार के मातृरूपों में अपने दायित्व का निर्वाह सुचारु रूप से कर सकती है। यहाँ शिक्षा का अर्थ सीमित पुस्तकीय ज्ञान या डिग्रियाँ इकट्ठा करने से नहीं है। शिक्षा का व्यापक अर्थ है जिसके साधन भी व्यापक हैं और लक्ष्य भी महत्। वैदिक युग की नारी को वही शिक्षा मिलती थी। इतिहास इसका साक्षी है। याज्ञवल्क्य की पत्नी अपने पति साथ वाद-विवाद करती थी। विदुषी गार्गी की विद्वत्ता जगत-प्रसिद्ध है। अगस्त्य मुनि को ऐसी पत्नी चाहिये थी जो सांसारिक सुखों से निर्लिप्त हो, त्याग-तपस्या का जीवन बिता सके। वे आर्यों-अनार्यों को एक करने के प्रयत्न में लगे थे जो पत्नी के सहयोग के बिना कठिन था। उन्हें मिली पत्नीरूप में लोपामुद्रा जिनके ज्ञान एवं साधना से मुनि का स्वप्न साकार हुआ।

विदर्भ के राजा की पुत्री लोपामुद्रा ने वैभव को ठुकराकर ज्ञान-वृद्ध मुनि को अपना जीवन सौंप दिया।

घोषा, अपाला आदि वैदिक युग की विदुषी नारियों को कौन नहीं जानता। अपनी ब्रह्मसाधना के कारण वे ब्रह्मवादिनी नारियों के रूप में विख्यात हैं। नारियों ने मन्त्रों की रचनायें की हैं।

रामायण महाभारत काल में भी आदर्शों का पालन करने वाली महान् नारियों की गाथा उस युग में भी शिक्षा के व्यापक लक्ष्य की ओर संकेत करती है।

मध्ययुग में हुई मीरा ने साहित्य को अनूठी देन दी। राजपूत वीरांगनाओं की शौर्यगाथा इतिहास कहता है। उनकी शिक्षा का लक्ष्य और स्वरूप धर्म के लिए, आन-बान के लिए मर-मिटने का था। रानी दुर्गावती, चाँदबीबी आदि का संगीत, कला और सैन्य-संचालन में दक्ष होना उस युग की शिक्षा के लक्ष्य की एवं व्यापक स्वरूप की कहानी कहता है। इसी प्रकार ताराबाई, अहिल्याबाई आदि के शौर्य की गाथायें भी।

कालान्तर में छोटी अवस्था में विवाह हो जाने के कारण शिक्षा के अधिकार छिन गये। स्त्रियों का उपनयन संस्कार बन्द कर दिया गया, जिसके बाद आठ वर्ष के बालक-बालिकायें वेदाध्ययन प्रारम्भ करते थे।

मनु ने नारी की महानता तो स्वीकार की पर स्त्री की रक्षा को आवश्यक बता दिया और उसकी स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध लग गये—

पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने।
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति ॥

फिर तो स्त्री सम्पत्ति बन गई। गोदान, स्वर्णदान की भाँति कन्यादान की भी परम्परा चल पड़ी। विधवा का पति की सम्पत्ति पर अधिकार नहीं रहा। नारी के कर्त्तव्य की सीमा, शान्ति के समय परिवार को सुखी बनाने में सहायक होना और युद्धकाल में विजयी बनाने में योग देना, मात्र निर्धारित हो गई। विधवा विवाह पर रोक लग गई। केवल राजघराने की लड़कियों को ही सैनिक शिक्षा या दूसरी शिक्षायें दी जाती थीं। वे ही वर चुनने को स्वतन्त्र थीं।

बौद्ध और जैनकाल में नारी को पुनः सम्मान मिला। बुद्ध ने मोक्षप्राप्ति के लिये स्त्री-पुरुष दोनों को बराबर समझा। संघ का द्वार नारियों के लिये खोल दिया। यह वह युग था जब स्त्रियों का क्रय-विक्रय होता था। पति किसी भी समय पत्नी को छोड़ सकता था। सम्पत्ति पर अधिकार पुत्र का फिर पौत्र का था। नारी ज्ञान-विज्ञान

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के क्षेत्र में बहुत पीछे थी। बुद्ध के विचार भी नारी के सम्बन्ध में पहले उदार नहीं थे। जैनधर्म की देखा-देखी बौद्धों ने भी नारी को अपने संघों में लेना प्रारम्भ कर दिया। बुद्ध की मौसी महाप्रजापति गौतमी ही पाँच सौ नारियों के साथ भिक्षुणी हुई और घूम-घूमकर धर्म-प्रचार किया, दीक्षा दी। भिक्षु संघ से अलग इनका पड़ाव होता था, अलग उनके लिये धर्मशालायें बनीं। बौद्ध नारियों में वत्सा का नाम प्रसिद्ध है जिसने साग को जल गया देखकर निर्णय लिया कि अधिक समाधि और अधिक समय तक ध्यान-कर्म से मन के राग-द्वेष जलाये जा सकते हैं। अतः गौतमी से दीक्षा ली। बिम्बसार की रानी क्षेमा तथा श्रेष्ठि-पुत्री भद्रा कुण्डल केशा, आम्रपाली, विशाखा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। विशाखा, वसन्तसेना आदि शिक्षित कुल-वधुयें थीं।

संघमित्रा ने विदेशों में जाकर बौद्ध-धर्म का प्रचार किया। विशाखा ने भिक्षु की ओर ध्यान दिये बिना भोजन करने वाले ससुर को देखकर कहा था कि मेरे ससुर बासी भोजन कर रहे हैं अर्थात् पूर्वजन्मों का संचित पुण्य खा रहे हैं, अगले जन्मों के लिये संचय नहीं कर रहे हैं। पिता के दिये हुए दहेज से उसने दो मंजिला विहार बनवाया था जिसे महामौद्गल्यायन चलाते थे। विशाखा को बुद्ध ने स्वयं नारी के कर्त्तव्य की शिक्षा दी थी और कुलवन्ती स्त्री के लिये आठ सूत्रों को ग्रहण करने का विधान बतलाया था जिसमें सास-ससुर की सेवा, मृदु भाषण, पति तथा उसके मित्रों और सन्तों का सम्मान, अकृपणदान, पंचशील का पालन आदि प्रमुख हैं।

महावीर स्वामी ने नारी को बहुत आदर किया। जैन धर्म का नियम था—संकट में नारी की रक्षा पहले हो। जैन धर्मावलम्बी अपने तीर्थंकरों की माताओं की पूजा करते थे। ब्राह्मी जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ की पुत्री थीं जिन्होंने सर्वप्रथम ब्राह्मी लिपि को सीखा और उन्हीं के नाम पर इस लिपि का नामकरण हुआ।

जैन धर्म में नारी के लिये पतिव्रत धर्म आदर्श माना गया है। जैन भिक्षुणियों में ऐसी अनेक भिक्षुणियों के नाम मिलते हैं जिन्होंने वैभवपूर्ण राजसी जीवन छोड़कर त्याग-तपस्या को अपनाया। महासती चन्दनबाला अंग देश के राजा दधिवाहन की पुत्री थीं। उन्होंने वर्द्धमान महावीर से दीक्षा ली और भिक्षुणी बन गईं। उस समय शिक्षा का स्वरूप चरित्र और धर्म की शिक्षा देना था।

बौद्ध धर्म की महायान और मंत्रयान शाखा ने भोग का भयावह रूप फैला दिया। अतः नारी के बन्धन और कस गये। तान्त्रिकों की दृष्टि से एवं मुसलमान शासकों की लोलुप दृष्टि से बचने के लिए पर्दा-प्रथा का प्रारम्भ हुआ और नारी-शिक्षा के द्वार बन्द हो गये। छोटी आयु में ही माँग में सिन्दूर भरकर पूर्ण हिन्दू नारी बनने के लिये ही उनमें संस्कार भरे जाने लगे।

उन्नीसवीं शताब्दी की नारियों में कुछ साहित्य और कला के क्षेत्र में प्रवृत्त हुईं, कुछ राष्ट्रीय आन्दोलनों में। उनमें "तोरुदत्त" ने चौदह वर्ष की आयु में ही शेक्सपीयर के समस्त साहित्य को पढ़ लिया। जर्मन, फ्रेंच और संस्कृत का भी गहन अध्ययन किया। उनकी लिखी पुस्तक "ए शीफग्लीण्ड इन फ्रेंच फील्ड्स" बहुत प्रशंसित हुई।

स्वर्णकुमारी देवी (देवेन्द्रनाथ ठाकुर की पुत्री) ने तेरह वर्ष की आयु में ही कवितायें लिखना आरम्भ कर दिया। वे प्रतिष्ठित लेखिका बनीं। कामिनी राय की दो महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कृतियों में से 'ओ लो ओ छाया' कविता संग्रह बहुचर्चित हुई। पंडित रमाबाई को उनके संस्कृत में भाषणों पर सरस्वती की उपाधि मिली। उन्होंने भारतीय नारियों को अज्ञान के अँधेरे से बाहर निकालने के लिये प्रथम महिला आर्य समाज संगठन चलाया। वे इंग्लैंड में भी संस्कृत पढ़ाती थीं। वहाँ से बच्चों को शिक्षित करने की मनोवैज्ञानिक विधि सीख कर आईं। 'उच्च जाति की हिन्दू महिला' शीर्षक से इनकी पुस्तक अमेरिका में प्रकाशित हुई। विधवा नारियों के लिये धन इकट्ठा करके बम्बई में आश्रम खोला। पूना में एक और नारी भवन 'मुक्ति सदन' नाम से खोला। इनकी पुत्री ने निजाम राज्य में एक आश्रम खोला। पंडित रमाबाई ने नारी-शिक्षा के प्रचार के लिये महत्त्वपूर्ण कार्य किये।

स्वतन्त्रता संग्राम में लक्ष्मी बाई आदि भारतीय नारियों के नाम अमर हैं। इन्हें बचपन से ही सैनिक शिक्षा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दी गई थी। इन्होंने अपनी सखियों को सैन्य संचालन में दक्ष करके सेना तैयार की थी। आत्म-सम्मान की रक्षा के लिये कुल-ललनाओं को अस्त्र-शस्त्र-संचालन की शिक्षा दी जाती थी।

एनी बेसेंट ने स्वाधीन विचारों को प्रचारित करने के लिये कई पत्रों का सम्पादन किया। फिर दर्शन में गहन रुचि लेने लगीं। १९१३ ई० में भारत आईं और यहाँ की राजनीति में भाग लेने लगीं।

आधुनिक युग में दयानन्द सरस्वती, राजा राममोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, रानाडे, एनी बेसेन्ट, गांधी आदि ने नारी की समस्याओं को उठाया और समान अधिकार दिलवाने के प्रयत्न किये। नारी भी अपने अधिकार और कर्त्तव्यों के प्रति जागरूक हुई। आर्य समाज ने नारी शिक्षा का प्रचार करके भूला हुआ ज्ञान का मार्ग दिखाया था। गांधी ने उन्हें उनकी शक्ति से परिचित कराया। सती प्रथा का अन्त १८२९ में ही हो चुका था और तभी शारदा एक्ट द्वारा बाल विवाह प्रथा बन्द हुई। पुनः नारी के लिये शिक्षा के द्वार खुल गये।

भारतीय नारी त्याग, तपस्या, सेवा और स्नेह की प्रतीक रही है। अपना खोया सम्मान उसने शिक्षा के माध्यम से पुनः प्राप्त किया। अब वह घर और बाहर के दुहरे दायित्वों को सँभालने के लिए उत्साह से आगे बढ़ी। कुछ विदुषी नारियों के नाम उल्लेखनीय हैं जैसे श्रीमती लक्ष्मी मेनन, सुचेता कृपलानी, श्रीमती मिट्ठन जे. लाम, रुक्मिणी देवी, अरुंडेल, वायलेट अल्वा, प्रेमा माथुर, मृणालिनी साराभाई, एस० एस० सुब्बालक्ष्मी, फातमा इस्माइल आदि ने विविध क्षेत्रों में सफलता प्राप्त कर नारी-शिक्षा को गौरवान्वित किया। आरती शाह ने इंगलिश चैनल पार कर तैराकी में प्रतियोगिता जीती। नारी का उत्साह बढ़ा। अब वह हर क्षेत्र में कार्य करने के लिये शिक्षा ग्रहण करने लगी।

श्रीमती भिखायीजी कामा प्रथम भारतीय महिला हैं जिन्होंने अनुभव किया कि भारत का अपना ध्वज होना चाहिये। भारत को दासता से मुक्त कराने वाली नारियों में कस्तूरबा गाँधी, कमला नेहरू, सरोजिनी नायडू, विजय-लक्ष्मी पंडित, राजकुमारी अमृतकौर, श्रीमती हंसा मेहता आदि विदुषी नारियों के नाम आदर से लिये जाते हैं। उनमें देश-प्रेम और क्रान्ति की भावनायें शिक्षा ने ही भरी थीं। इस प्रकार शिक्षा का लक्ष्य समय की आवश्यकताओं के अनुरूप निर्धारित होता रहा। पर यदि विचार किया जाय तो लगता है कि प्रारम्भ से ही शिक्षा का मूल उद्देश्य नैतिक एवं चारित्रिक दृढ़ता के साथ ही सफल जीवन की उपलब्धि रहा है। वह चाहे आध्यात्मिक दृष्टि से हो या भौतिक दृष्टि से। इतना निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि पहले आध्यात्मिक सुख की उपलब्धि और आत्मसम्मान की रक्षा पर अधिक बल था पर आज की शिक्षा का लक्ष्य भौतिक जीवन को अधिक सहज और समृद्ध बनाना होता जा रहा है। और लक्ष्य के आधार पर ही शिक्षा का स्वरूप निर्धारित होता है।

आज एक ज्वलंत प्रश्न सामने है कि यदि नारी और पुरुष को समान अधिकार प्राप्त हैं, समान कार्यक्षेत्र है तो क्या उनकी शिक्षा का स्वरूप और लक्ष्य भिन्न-भिन्न होना समीचीन है? और यदि भिन्नता आवश्यक है तो क्यों और किस सीमा तक? आधुनिक नारी इस भेद को अपने को अक्षम और अबला समझे जाने की दृष्टि के कारण अपमान समझती है। उसने दिखा दिया है कि उसे यदि समान अवसर और सुविधा मिलें तो वह किसी भी क्षेत्र में पुरुष से पीछे नहीं।

दूसरा प्रश्न जो आज एक समस्या बन गया है, यह है कि क्या हर क्षेत्र की नारी की शिक्षा का स्वरूप और लक्ष्य एक जैसा ही होना चाहिये। शहरी और ग्रामीण नारी के कार्यक्षेत्र भिन्न हैं, परिवेश भिन्न हैं। क्या उन्हें एक जैसी ही शिक्षा देकर उनकी परिवेश में सामंजस्य की क्षमता का विकास किया जा सकता है? या उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकार से प्रशिक्षित करके क्या उनके बीच की दूरियों को और बढ़ाने का प्रयास नहीं किया जायेगा? यही बात हर-वर्ग की नारी की शिक्षा को लेकर की जा सकती है।

पर यदि विचार किया जाय तो इन समस्याओं का हल बहुत कठिन नहीं है। नारी को शिक्षित करने का

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्थ है पुरुष को शिक्षित करना। जैसा कि वेदों में माता के अनेकों रूपों का दिग्दर्शन कराया गया है वह हर रूप में पुरुष की प्रेरणा है, शिक्षिका है।

अलग-अलग क्षेत्रों के लिये शिक्षा में परिवेश की आवश्यकता के अनुसार पाठ्यक्रम तो होने चाहिये पर शिक्षा का मूल लक्ष्य तो यही होना चाहिये—अपने को परिस्थितियों के अनुसार ढालने की क्षमता देना। यह क्षमता उसी में आयेगी जिसमें नैतिक बल होगा, चारित्रिक दृढ़ता होगी। नैतिकता और सच्चरित्रता के मानदंड भी समय-समय पर परिवर्तित होते रहते हैं पर उनकी मूल आत्मा आज भी वही है जो वैदिक युग में थी।

शिक्षा के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण बात है अभिरुचि और आवश्यकता की। नारी हो या पुरुष जिस विषय या क्षेत्र में उसकी अभिरुचि होगी, गहन अध्ययन की आकांक्षा और उत्साह होगा, उसके लिये वही उपयुक्त क्षेत्र है। आवश्यकताओं के आधार पर भी शिक्षा के स्वरूप का और लक्ष्य का निर्धारण समीचीन है।

आज नारी की शिक्षा के लिये शासन और समाज दोनों ही उदार हैं पर कुछ समस्यायें आज भी नारी की शिक्षण-प्रगति के आगे प्रश्न चिह्न लगा देती हैं। उनमें सबसे भीषण है—दहेज की समस्या। माता-पिता इस डर से बेटी को नहीं पढ़ाते कि फिर उसके अनुरूप वर ढूँढने में कठिनाई होगी, अधिक दहेज जुटाना पड़ेगा उसके लिये। पर धीरे-धीरे लोग जागरूक हो रहे हैं। अब पुत्री को शिक्षित और आत्मनिर्भर बनाकर पति-गृह में भेजने की ओर लोगों का झुकाव बढ़ रहा है। अब ऐसे लोगों का प्रतिशत घटता जा रहा है जो लड़कियों की शिक्षा-दीक्षा का निर्लज्जता और स्वेच्छाचारिता के भय से विरोध करते थे। पर आज आवश्यकता है नारी-वर्ग में आत्मविश्वास की जो समाज की आवश्यकताओं को पूरी कर सके।

माध्यमिक शिक्षा में कई वर्ग हैं। पाठ्यक्रम के साहित्यिक, विज्ञान, प्राविधिक, कृषि आदि। कुछ विषय या वर्ग ऐसे हैं जिन्हें लेने के लिये अभी भी बालिकायें संकोच करती हैं, अपने लिये अनुपयुक्त समझती हैं, उदाहरण के लिये—कृषि। अविभावकों और अध्यापकों का यह कर्तव्य है कि वे उनकी झिझक दूर करके उन्हें प्रोत्साहित करें। यदि नारी डाक्टर, इन्जीनियर, वैज्ञानिक बन सकती है तो क्या वह वैज्ञानिक ढंग से खेती करवाने में सक्षम खेतिहर नहीं बन सकती?

उसी प्रकार सैनिक शिक्षा के प्रति हमारा दृष्टिकोण उदार नहीं है। इतिहास साक्षी है कि नारी ने आवश्यकता पर पड़ने पर युद्धभूमि में पुरुषों के छक्के छुड़ा दिये। अतः यदि किसी नारी की रुचि इस क्षेत्र में हो तो उसे प्रोत्साहित करें। थल सेना, जल सेना, वायु सेना तीनों में ही नारी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। वैसे भी नारी को अपनी आत्म-रक्षा के लिये सबल बनना आवश्यक है।

मातृत्व की शिक्षा-नारी शिक्षा का सबसे महत्त्वपूर्ण अंग होना चाहिये। यह गुण प्रकृति ने केवल नारी को दिया है। आज आवश्यकता है नारी अपने में मातृत्व गुणों का विकास करे तभी वह समाज को नई दिशा दे सकती है।

धर्म समाज की रीढ़ है। धर्म का अभिप्राय संकीर्ण सांप्रदायिक मनोवृत्ति से नहीं है। धर्म बहुत ही व्यापक शब्द है। अतः शिक्षा में धर्म की मूल आत्मा को महत्त्व मिलना आवश्यक है। तभी समाज अनुशासित होगा, तभी चारित्रिक बल बढ़ेगा और नारी वैदिक नारी की गरिमा से युक्त होगी। आज की आवश्यकताओं और परिवेश के अनुरूप ही शिक्षा स्वरूप और लक्ष्य निर्धारित करना अभिप्रेत है।

□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org